P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-5* (Part-1) January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

चित्तवृत्ति निरोधः प्रासंगिकता एवं विविध आयाम

इन्द्रनारायण झा
व्याख्याता,
संस्कृत विभाग,
राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय,
चेचट, कोटा, राजस्थान,
भारत

सारांश

मानव जीवन का परम उद्देश्य सत्य की अथवा परमतत्व की प्राप्ति है। निज स्वरुप के बोध का मार्ग अध्यात्म प्रदशित करता है। मनुष्य मात्र में दिव्यता अन्तर्निहित है। अपनी इस भीतरी दिव्यता से तादात्म्य स्थापित करना ही हमारा लक्ष्य होता है। चित्त की चंचलता, राग–द्वेष में लिप्त होने के कारण चित्त की मलीनता, इससे उत्पन्न निरर्थक विचारों का चक्र तथा काम क्रोध आदि मनोविकार अध्यात्म की इस यात्रा में बाधा उत्पन्न करते है। सुख–लोलुपता एवं दुःख के प्रति भय का भाव रखने वाली ये चित्त वृत्तियां अहर्निष चलायमान रहती ह तथा हमारे विवेक को जागृत व प्रकाशित नहीं होने देती। चित्तवृत्तियों के निरोध से ही मानसिक दृढता व एकाग्रता प्राप्त होती है। तथा यही दृढता आध्यात्मिक प्रगति का मूल आधार होती है। यम–नियम, ध्यान–धारणा प्रत्याहार आदि से होते हुए अन्तिम लक्ष्य समाधि अथवा मुक्ति तक की यह यात्रा चित्तवृत्तियों के निरोधन से सहज ही सम्पन्न होती है। राग–द्वेष का अभाव, सुख–दुःख में समता का भाव प्राप्त होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में आध्यात्मिक उन्नति में सर्वाधिक बाधक चित्तवृत्तियों का परिचय, इनकी चंचलता के कारण तथा इनके निरोध के विभिन्न शास्त्रोक्त उपायों व दार्शनिक मतों पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द : चित्तवृत्ति, अन्तर्जगत, मन, एकाग्रता, समाधि, परमतत्व।

प्रस्तावना

चित्तवृत्ति क्या है –इस विषय में वशिष्ठ जी श्रीराम जी को कहते है–

अस्य संसाररुपस्य मायाचकस्य राघव। चित्त विद्धि महानाभिं भ्रमतो भ्रमदायिनः।।
तस्मिनद्रुतमवष्टब्धे धिया पुरुषयत्नतः। गृहितनाभिवहनान्मायाचक्रं निरुध्यते।।

इस भ्रमित करने वाले, घूमने वाले संसार रुपी मायाचक्र की नाभि चित्त है। इस नाभि को बुद्धि और पुरुषार्थ द्वारा जोर से पकड लेने से मायाचक्र की गति रुक जाती है। जिस साधन से इस बहिर्जगत् और अन्तर्जगत् को जाना जाता है उस साधन का नाम चित्तवृत्ति है। इससे चित्तवृत्ति का महत्व स्वयं उजागर हो जाता है। हम बहिर्जगत् में व्यवहार करना हो या अन्तर्जगत् में, हमारा व्यवहार तब ही सफल हो सकता है जब हम बहिर्जगत् तथा अन्तर्जगत् के स्वरुप को जानें। चित्त प्रकृति का ही एक सूक्ष्म रुप है। प्रकृति के तीन गुण हैं – सत्त्व, रजस् और तमस्। सत्त्व का आधिक्य होने पर सुख, रजोगुण आधिक्य होने पर दुःख तथा तमोगुण का आधिक्य होने पर जडता होती है। अतः चित्तवृत्ति में कभी सुख, कभी दुःख तथा कभी जडता व्यक्त होती रहती है। चित्तवृत्ति के ये सुख, दुःख और जडता ही पुरुष में प्रतिबिम्बित होते जातें है। प्रारम्भिक मनीषी अन्तःकरण को चित्त अथवा कभी कभी केवल बुद्धि कहकर सम्बोधित करते थे। कालान्तर में अन्तःकरण का विभाजन मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार की चार प्रमुख वृत्तियों में किया गया, वैसे अन्तःकरण की प्रवृत्तियां अनन्त है।

कामकोधभयस्नेहहर्षशोकदयाऽऽदयः।
तापकाश्चित्तजतुनस्तच्छान्तौ कठिनं तु तत्।। (1/5/भक्तिरसायन)

भक्तिरसायन में मधुसूदनाचार्य कहते है कि काम, क्रोध, भय, स्नेह, हर्ष, शोक, दया आदि भाव चित्त रुपी लाख को तपाकर द्रवित करनें वाले है। भाव रुपी ऊष्णता के शान्त होने पर चित्त रुपी लाख पूर्व के समान कठोर हो जाती है। यह आत्मा, शरीर तथा ह्रदय तीनो से भिन्न एक स्वतन्त्र तत्व है, और अन्तःकरण की चार वृत्तियों में से एक वृत्तिके रुप में माना गया है। परन्तु योगशास्त्र में इसी को चित्त कहा गया है।

योगवासिष्ठकार ने मन को अनेक नामों से व्याख्यायित किया है। मन के अनेक नाम है। मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त, कर्म, कल्पना, संसृति, वासना, विद्या,

प्रयत्न, स्मृति, इन्द्रिय, प्रकृति, माया और क्रिया। इन पन्द्रह नामों से मन को पहचाना जाता है। मन नाममात्र के अलावा और कुछ भी नहो है। इस मन का बाहर–भीतर कहीं भी सत्यरुप विद्यमान नहीं है। फिर भी शून्य और जड आकार वाले आकाश के समान उसकी सर्वत्र व्याप्ति है। निराकार चेतना का जो पदार्थ विद्यमान होता है, उसी को चित्त कहा जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य

वर्तमान समय में मानव दुखी पीडित व त्रस्त है। अशांत मानव लोभ क्रोध अहंकार आदि मनोविकारों से ग्रसित है। आधुनिकता भोगवादी संस्कृति के अंधानुकरण एवं अव्यवस्थित जीवन शैली ने न केवल हमारे समाज राष्ट्र अपितु संपूर्ण विश्व समुदाय को दुष्प्रभावित किया है। स्वस्थ समृद्ध व सुंदर समाज की पुर्नस्थापना का आधार सुसंस्कृत जीवन पद्धति है। योग मानव के उन्नयन का एकमात्र साधन है। मन की एकाग्रता व चंचल चित्त वृत्तियों के निरोध से शारीरिक स्वास्थ्य मानसिक शान्ति आत्मिक कल्याण की प्राप्ति तथा जीवन की समस्त समस्याओं का समाधान संभव है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य चंचल चित्तवृत्तियों का विश्लेषण एवं उनके निरोध के उपाय संबंधी विविध मतों का वर्णन है।

चित्तवृत्ति के प्रकार

चित्तवृत्ति की पाँच स्थियाँ बताई गई हैं – 1. चन्चल चित्तवृत्ति 2. सुशुप्त चित्तवृत्ति 3. बाहरी जगत् पर केन्द्रित चित्तवृत्ति, 4. आन्तरिक जगत् पर एकाग्र चित्तवृत्ति तथा 5. लय को प्राप्त चित्तवृत्ति। इनमें चंचल चित्तवृत्ति को रजोगुण प्रधान माना जाता है। ऐसे व्यक्ति को क्षिप्त कहा जाता है। सुशुप्त चित्तवृत्ति के व्यक्ति मूढ कहलाते है। वे तमोगुण के कारण कुछ करना नही चाहते अथवा अकरणीय कर्म ही करते है। वे या तो आलस्य में पडे रहते हैं या कलह में अपना समय बितातें है। बहिर्जगत् पर केन्द्रित चित्तवृत्ति के मनुष्यों में सत्व गुण प्रधान होता है। वह शास्त्र–विहित कर्म करते है। विफल होने पर भी, वे विचलित नही होते। वे परमार्थ के कार्य भी करते है। अन्तर्जगत् में एकाग्र चित्तवृत्ति के व्यक्ति के समक्ष भीतरी जगत् रहस्य उदघाटित होने लगते है। अन्तर्मुखता प्रारम्भ होने पर पहले स्थूलभूतों का, फिर सूक्ष्मभूतों का फिर 'अहम्अस्मि' ऐसा और फिर 'अस्मि' ऐसा ज्ञान होता है। ये चारो स्थितियाँ सम्प्रज्ञात समाधि कहलातो है।

वृत्तयः पंचतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः।। 1.5।।

पाँच प्रकार कि चित्तवृत्तियॉ – अविद्यादि क्लेश उत्पन्न करने वाली तथा क्लेशों का नाश करने वाली – अर्थात् दो प्रकार की होती है। अविद्यादि को क्षीण करने वाली वृत्तिअक्लिष्ट कही जाती है। किन्तु क्लेश उत्पन्न करने वाली चित्तवृत्ति क्लिष्ट कहलाती है।

प्रमाण–विपर्यय–विकल्प–निद्रा–स्मृतयः।। 1.6।।

पाँच प्रकार कि चित्तवृत्तियाँ हैं – प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। यों तो सभी चित्तवृत्तियां पुरुष के स्वरुप में स्थित होने में बाधक हैं, किन्तु सभी चित्तवृत्तियाँ योग की प्रारम्भिक अवस्था में हेय नहीं है। उदाहरणतः हम यागसूत्र का अध्ययन कर रहें है। इस अध्ययन के समय में हमारी चित्तवृत्ति ही काम कर रही है किन्तु यह चित्तवृत्ति स्वयं योग रुप न होकर हमें योग के निकट ले जा सकती है। निद्रा के अतिरिक्त चार चित्तवृत्तियां और हैं– प्रमाण, विपर्यय, विकल्प और स्मृति। प्रमाण नामक चित्तवृत्ति पदार्थ का यथार्थ बोध कराती है जबकि विपर्यय में पदार्थ का विपरीत ज्ञान होता है।

विपर्ययों मिथ्याज्ञानमतद्रुपप्रतिष्ठितम।।

रज्जु का रज्जु रुप में ज्ञान कराने वाली चित्तवृत्ति प्रमाण है किन्तु रज्जु में सर्प की प्रतीति कराने वाली चित्तवृत्ति विपर्यय है।

शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यःविकल्पः।।

इसके विपरीत जहाँ हमारा ज्ञान वस्तुतः वैसा ही होता है, जैसी वस्तु है, वहा प्रमाण नाम की चित्तवृत्ति रहती है। विपर्यय में वस्तु के स्वरुप में विपरीत ज्ञान होता है।

विपर्ययों मिथ्याज्ञानमतद्रुपप्रतिष्ठितम्।।

यह विपर्यय ही समस्त अनर्थ की जड है। इसे अविद्या भी कहा जाता है।

योग में निद्रा को एक चित्त वृत्ति माना गया है। निद्रा में हमें अभाव का ज्ञान होता है।

अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा।।

निद्रा में ज्ञान का अभाव है परन्तु इस अभाव का भान कराने के कारण निद्रा भी एक चित्तवृत्ति ही है।

अनुभ्तविषयासम्प्रमोशःस्मृतिः।।

विगत के अनुभवों का स्मरण वर्तमान में करवानें वाली वृत्तिस्मृति है।

चित्तवृत्ति की चंचलता

द्रष्टा तो सदा अपने स्वरुप में ही स्थित रहता है किन्तु चित्तवृत्ति दृष्यों में भटकती रहती है। चित्तवृत्ति की यह भटकन पुरुष में प्रतिबिम्बित हो जाती है। पुरुष निर्विकार ही रहता है, किन्तु चित्त की जैसी वृत्ति होती है, वैसा ही पुरुष भी प्रतीति में आने लगता है।

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।।

हे श्रीकृष्ण! यह मन बडा चंचल है, प्रमथन स्वभाववाला है (प्रमथन अर्थात् दूसरे को मथ डालनेवाला), हठी तथा बलवान् है, इसलिये इसे वश में करना में वायु की भाति अतिदुष्कर मानता हूँ।

चित्तवृत्ति निरोध के साधन/उपाय

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।। 1.2।।

चित्तवृत्तियों का निरोध योग है। निरोध का अर्थ चित्तवृत्ति का सर्वथा रोक लेना तो है ही–जिसे असम्प्रज्ञात समाधि कहा जाता है, किन्तु निरोध से पूर्व चित्तवृत्ति की एकाग्रता साधनी होती है–जिसे सम्प्रज्ञात समाधि कहा जाता है। असम्प्रज्ञात समाधि तो त्रिगुणातीत है किन्तु सम्प्रज्ञात समाधि में सत्वगुण प्रधान रहता है और तमस् का आवरण तथा रजस् का विक्षेप क्षीण हो जाता है। प्रायः साधक चित्तवृत्ति का सर्वथा निरोध प्रारम्भ में नहीं कर पाता। अतः प्रारम्भ में चित्तवृत्ति की एकाग्रता ही सधती है। इस एकाग्रता का पर्यवसान होने पर व्यक्ति अपने स्वरुप को जानकर उसमें अवस्थित हो जाता है। अब चित्तवृत्ति की आवश्यकता ही नही रहती। अतः चित्तवृत्ति का निरोध हो जाता है। यही वास्तविक योग है। चित्तवृत्ति की

एकाग्रता योग का गौण लक्षण है, योग का मुख्य लक्षण तो चित्तवृत्ति का निरोध ही है। चित्तवृत्ति की एकाग्रता से प्राप्त होने वाली शक्तियाँ भी आनुवांशिक ही हैं, मुख्य फल तो स्वरुप में स्थित होना ही है क्योंकि स्वरुप में स्थित हुए बिना दुःखों का अन्त नहीं हो सकता। चित्तवृत्ति निरोध हेतु योग में साधक के मार्ग–दर्शन के लिए आठ उपायों का वर्णन है जिसे अष्टांग–योग कहते है। ये आठ उपाय भी दो भागो में विभक्त है– बहिरंग और अन्तरंग। बहिरंग में प्रथम उपाय है– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पालन। ये यम कहलाते है। शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर–प्रणिधान ये नियम है। यम के अर्न्तगत वे बिन्दु बताए गए है जिधर चित्तवृत्ति को नही जाने देना चाहिए– हिंसा, झ्ठ, चोरी, वासना और सुख की लोलुपता से बचना चाहिए। यह योग की प्रथम शिक्षा है, जो साधक के जीवन को निर्मल तथा प्रशस्त बनाती है। नियम विधायक है। इनमें तप, स्वाध्याय और ईश्वर–प्रणिधान को पतंजलि ने क्रियायोग नाम दिया है। इनसे समाधि में सहायता मिलती है और अज्ञानादि क्लेश निर्बल होते हैं।

बाह्यान्तर शुचि शोच

कर्तव्य पालन से प्राप्त फल में सन्तुष्ट रहना, सन्तोष फल को भगवान पर छोड देना ईश्वर प्रणिधान है। इन्द्रियों पर संयम का अभ्यास तप है। इन्द्रियाँ ही अपने–अपने विषयों के प्रति लोलुपता–वश चित्तवृत्ति को चंचल बनाये रहती है।

पतजंलि के अनुसार

महर्षि पतंजलि कहते है कि चित्तवृत्ति के निरोध के दो उपाय है– अभ्यास और वैराग्य– **अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।** हमारी चित्तवृत्ति राग के कारण चलायमान है अनेकानेक विचार अनावश्यक होते हुए भी हमारे भीतर चलते रहते है। जो अहम् एवं 'मम' अर्थात् राग के कारण ही उत्पन्न होते है। विराग अर्थात् राग से रहित होने का प्रयास व अभ्यास निर्विचारिता में स्थित करता है। निर्विचारता का यत्नपूर्वक अभ्यास करना होगा– **तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः।** अभ्यास की अद्भुत महिमा है।

गीतोक्त श्री कृष्ण के अनुसार –

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियकियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये।। 12।।

उस आसन पर बैठकर मन को एकाग्र करके, चित्त आर इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में रखते हुए अन्तःकरण की शुद्धि के लिये योगाभ्यास करें।

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्।। 13।।

शरीर, गर्दन और सिर को सीधा, अचल स्थिर करके दृढ होकर बैठ जाय और अपनी नासिका के अग्र भाग को देखकर अन्य दिशाओं को न देखता हुआ स्थिर होकर बैठे और –

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः।। 14।।

भयरहित और अच्छी प्रकार शान्त अन्तःकरणवाला मन को संयत रखते हुए, मुझमें लगे हुए चित्त से युक्त मेंरे परायण होकर स्थित हो।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।। 17।।

दुःखों का नाश करनेवाला यह योग उचित आहार–विहार, कर्मों में उपयुक्त चेष्टा और संतुलित शयन–जागरण करनेवाले का ही पूर्ण होता है।

शनैः शनैरुपरमेंद्बुद्धया धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिन्तयेत्।। 25।।

क्रम–क्रम से अभ्यास करता हुआ उपरामता को प्राप्त हो जाय। चित्त का निरोध और क्रमशः विलय हो जाय। तदनन्तर वह धैर्ययुक्त बुद्धि द्वारा मन को परमात्मा में स्थित करके अन्य कुछ भी चिन्तन न करे। निरन्तर लगकर पाने का विधान है। किन्तु आरम्भ में मन लगता नहीं, इसी पर योगेश्वर कहते है–

यतो यतो निश्चरति मनश्चंयलमस्थिरम्।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्।। 26।।

यह स्थिर न रहने वाला चंचल मन जिस–जिस कारण से सांसारिक पदार्थो में विचरता है, उस–उस से रोककर बारम्बार अन्तरात्मा में ही निरुद्ध करें। श्रीकृष्ण का कथन है कि मन जहां–जहां जाय, जिन माध्यमों से जाय, उन्हीं माध्यमों से रोककर परमात्मा में ही लगावे। मन का निरोध सम्भव है। इस निरोध का परिणाम क्या होगा।

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मशम्।। 27।।
असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासने तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्मते।। 35।।

महाबाहु अर्जुन! निःसन्दह मन चंचल है, बडी कठिनाई से वश में होनेवाला है, परन्तु कौन्तेय! यह अभ्यास और वैराग्य के द्वारा वश में होता है। जहां चित्त को लगाना है, वहां स्थिर करने के लिये बार–बार प्रयत्न का नाम अभ्यास है। सांसारिक विषय–वस्तुओ। में राग का त्याग वैराग्य ह। श्रीकृष्ण कहते हैं कि मन को वश में करना कठिन है, किन्तु अभ्यास और वैराग्य के द्वारा यह वश में हो जाता है।

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इतिमें मतिः।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः।। 36।।

अर्जुन! मन को वश में न करनेवाले पुरुष के लिए योग प्राप्त होना कठिन है, किन्तु स्ववश मनवाले प्रयत्नशील पुरुष के लिये योग सहज है, ऐसा मेंरा अपना मत है। जितना कठिन तू मान बैठा है, उतना कठिन नहीं है।

नासतो विद्यते भावः।

आसक्तिपूर्वक भोगे गए भोगों का भूत व वर्तमान में अभाव मानकर चित्त की चंचलता को निरुद्ध किया जा सकता है। उन भोगों का दृढता से अभाव माने, उसकी उपेक्षा करे, न राग–न द्वेष करे अपितु तटस्थ हो जाए तो चित्त अवश्य ही निरुद्ध हो सकेगा।

आचार्य शंकर के अनुसार

पुरुष का अस्थिर और चंचल मन जिस–जिस विषय की ओर भागता है, उसे उस–उस विषय से हटाकर आत्मा में ही उसका स्थापन करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार से विवेक एवं वैराग्य के प्रभाव से साधक का मन स्थिर हो जाता है अर्थात् वह स्थिरचित्त हो जाता है।

निष्कर्ष

आचार्य शंकर मन को वश करना कठिन मानते हैं। मन दीपशिखा की भाँति चंचल है, प्रमाथी है। मन इतना चंचल और दुर्धर्ष है कि इसे वायु को रोकने के समान कठिन है। अर्जुन द्वारा कृष्ण से पूछे गये उपरोक्त प्रश्न का आशय स्पष्ट करते हुए आचार्य शंकर का अपने भाष्य के माध्यम से कथन है कि जिस प्रकार दूध अथवा दही को मथानी मथ डालती है उसी प्रकार से मन समस्त इन्द्रियों को मथ डालता है अथवा क्षुब्ध कर देता है। यह गजराज की भाँति बलवान् भी है अर्थात् जैसे बडे हाथी पर बार–बार अंकुश से प्रहार करने पर भी उस पर कोई असर नहीं होता ओर वह अपनी मनमानी करता ही है उसी प्रकार विवेकज्ञान द्वारा अंकुश लगाये जाने पर भी यह चंचल मन विषयों के दलदल में फँसता ही जाता है। अतः आचार्य विवेकज्ञान की अनिवार्यता को सिद्ध करते है। सृजनात्मक शुभ विचारों द्वारा मनोविकारों का नाश कर, स्वाध्याय, तप, यम–नियम का पालन करते हुए चित्तवृत्ति निरोध का प्रयास करना चाहिए। इन्द्रियो की स्थूल, सूक्ष्म एवं सूक्ष्मातिसूक्ष्म लिप्साओं पर नियन्त्रण द्वारा ही इन्द्रिय निग्रह व चित्तवृत्ति निरोध सम्भव है।

चित्तवृत्ति को निरुद्ध करने वाला साधक – अधोगति में ले जाने वाले अप्रमाद, आलस्य, अतिनिद्रा, मोह, दुर्गुण एवं दुराचारादि से सर्वथा रहित हो जाता है। इस पकार के प्रशान्त मनवाले तथा ब्रह्मभाव को प्राप्त हुये योगी को उत्तम सुख की प्राप्ति होती है। उसमें रजोगुण एवं तमोगुण का अभाव हो जाता है और वह ब्रह्मभाव को प्राप्त कर लेता है। मनुष्य सांसारिक भोग विलासों से स्वयं को निःसृत कर लेता है और अपने आपको परमतत्व में स्थित कर लेता है तब उसे परमानन्द की प्राप्ति होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

पातंजल योग प्रदीप – ओमा नन्द महाराज – गीता प्रस, गोरखपुर।

घेरण्ड संहिता – स्वामी निरजनानन्द सरस्वती – योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार

हठयोग प्रदीपिका – परमहंस स्वामी अनन्त भारती (लेखक स्वात्माराम)

पातंजली योगसूत्र – व्या० स्वामी प्रेमेशानन्द (मूल लेखक महर्षि पतंजलि)

योग विज्ञान – डॉ० राम किशोर – चौखम्भा ओरयन्टालिया

शिव संहिता (योगषास्त्रम) – राघवेन्द्र शर्मा राघव (व्याख्याकार)

सिद्धसिद्धान्त पद्धति – स्वामी द्वारिकादासशास्त्री (सम्पादकोऽनुवादश्च)

नवयोगिनी तन्त्र (महिलाओं के लिए योग साधना पद्धति) – स्वामी मुक्तानन्द (प्रत्यक्ष मार्गदर्शन – स्वामी सत्यानन्द सत्यानन्द सरस्वती) – योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार

योग वसिष्ठ – महर्षि वाल्मीकि